# हिन्दी साहित्य विविध आयाम

संपादक

रेखा रानी

**प्रधान कार्यालय :**
**गीना प्रकाशन**
202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,
भिवानी-127021 (हरियाणा)
मोबाइल : 9466532152, 8708822674
ई-मेल : ginapk222@gmail.com

*व्यवस्थापक गीना प्रकाशन ने सानिया पब्लिकेशन, दिल्ली से पुस्तक प्रकाशित करवाकर मुख्य कार्यालय से वितरित की।*

ISBN : 978-93-89047-27-1

© : लेखक

मूल्य : ₹ *500 /-*

प्रथम संस्करण : सन् 2021

प्रकाशक : सानिया पब्लिकेशन
323, गली नं. 15,
कर्दमपुरी एक्सटेंशन,
दिल्ली-110094
मोबाइल : 8383042929, 7292063887
Email : saniapublicationindia@gmail.com

आवरण : एम. सलीम

शब्द-संयोजन : मुस्कान कम्प्यूटर्स, दिल्ली-110094

मुद्रक : विशाल कौशिक प्रिंटर्स
जगतपुरी विस्तार, दिल्ली-110093

Hindi Sahitya : Vividh Aayam
*Edited by Rekha Rani*

Price Rs. 500.00

साहित्य
भी कुछ घटि
के माध्यम से
की चिन्ताओं
वाणी देना सा
साहित्यम से
बना है जिस
रचना विभिन्न
साहित्य
जैसेः–स्त्री वि
और दलित वि
गई हो पर उ
कर्तव्य निर्वाह
प्रभावित करने
आयाम', में हि
विविध पक्षों

12. जयप्रकाश कर्दम की कहानी 'मूवमेंट' में नारी चेतना 99
**विद्या के पी**
13. दलित लेखकों की कहानियों में विविध आयाम 102
**डॉ. बाबूलाल धनदे**
14. दलित साहित्य में दलित विमर्श 110
**संतराम**
15. दलित साहित्य और जाति के प्रश्न 118
**आनंद दास**
16. हिन्दी दलित कविताओं में सामाजिक यंत्रणा और यथार्थ 130
**अम्बर कुमार चौधरी**
17. दलित लेखकों की आत्मकथाओं में विविध आयाम 141
**सुमित्रा सैनी**
18. दलित साहित्य में दलित विमर्श 146
**गजानन्द मीणा**
19. संत साहित्य में दलित विमर्श के विविध आयाम 155
**डॉ. शक्ति बुद्धिराजा**
20. किन्नर विमर्श : पोस्ट बॉक्स नंबर 203 नालासोपारा उपन्यास के परिप्रेक्ष्य में 162
**रेश्मा एम. एल.**
21. आधुनिक कहानी में विज्ञापन की दुनिया 167
**डॉ. बबलू कुमार भट्ट**
22. 21वीं सदी में दलित-साहित्य 171
**डॉ. गीतू खन्ना**
23. वृद्ध विमर्श 177
**महेन्द्र कौर**
24. नासिरा शर्मा और आकांक्षा पारे की कहानियों में नारी विमर्श 184
**प्रा. आमलपुरे सूर्यकांत विश्वनाथ**

# 21वीं सदी में दलित-साहित्य

**डॉ. गीतू खन्ना**
प्रवक्ता, हिन्दी विभाग
गुरु नानक गर्ल्ज़ कालेज, संतपुरा
यमुनानगर (हरियाणा)

भारत की सामाजिक व्यवस्था में जाति और धर्म प्रधान है। धर्म, वर्ण, अस्पृश्यता, भेदभाव आदि दुष्चक्रों को खत्म करने के लिए सामाजिक चेतना अपना कार्य करती रहती है। साहित्य में सामाजिक चेतना पल्लवित एवं पोषित होती है। साहित्य ऐसी तमाम समस्याओं का मुकाबला करता है जो सामाजिक समानता में बाधा डालता है। साहित्य में व्यक्त चेतना के प्रभाववश वंचित समुदाय भी अपने अनुभवों को जगत के सामने ले आता है। अपनी अनुभवों की दास्तान को अभिव्यक्ति देकर ऐसा समुदाय अपने दर्द एवं उत्पीड़न का अहसास सबको कराने का प्रयास करता है। अस्मितामूलक विमर्श का जन्म इसी भाव की देन है। अपने आक्रोश, विद्रोह, विक्षोभ, पीड़ा, अन्याय, संताप आदि अभिव्यक्त करके वंचित वर्ग अपने को मुख्यधारा में शामिल करना चाहता है। भूमंडलीकरण की विशिष्ट परिस्थितियों भी इसमें अपना सहयोग करती है। शिक्षा, समता, संघर्ष, एक भाव जैसे जीवन–सूत्र व्यवस्था परिवर्तन की आकांक्षा उत्पन्न करता हैं। जिससे एकता में सीमाओं से ऊपर उठकर अनुभूतियों के आधार पर समानता की भाव उत्पन्न होने लगते हैं। फिर साहित्य इन्हें शब्द देता है। भाव एवं शब्दों का मेल साहित्य में नए विमर्शों का उत्पन्न करता है।

साहित्य समाज का प्रतिरूप है। वह समाज और विश्व में मौजूद चुनौतियों का मुकाबला करने को सर्वदा उद्धत रहता है। वैश्विक वातावरण की भयावहता के मध्य साहित्य एकमात्र उम्मीद है। समाज एवं संवेदना के मध्य बढ़ती खाई को भरने का कार्य साहित्य ही कर सकता है। मानवता को बचाए रखने का कार्य एवं उसकी जिम्मेदारी का निर्वाह साहित्य कर भी रहा

है। संवेदनात्मक न्यूवता एवं पूंजी आधारित तंत्रा की लोलुपता की स्थिति के कारणों एवं उनकी नग्न स्थित को साहित्य उद्घाटित करने का प्रयत्न कर रहा है। जातीय अस्मिता और निजी स्वतंत्रता के हनन को साहित्य में व्यक्त कर प्रतिरोध में भी खड़ा हुआ है। अपनी विधागत ताकतों के साथ साहित्य मनुष्यता के समक्ष आते हर खतरे का सामना करने को तैयार है। नवीनतम विधाओ का प्रयोग करके साहित्य स्वयं को व्यवस्थित भी कर रहा है। विधाएँ सभी चुनौतियों का सामना करने में सक्षम है।

दलित साहित्य जन साहित्य है। यह साहित्य मानवीय मूल्यों की भूमिका पर सामंती मानसिकता के विरुद्ध आक्रोश–जनित संघर्ष और विद्रोह से उपजा है। इस साहित्य की मुख्य प्रयोजन – शोषण के बंधनों से मनुष्य को मुक्त रखना चाहिए। उसका स्वतंत्र अस्तित्व स्वीकार करना चाहिए।

दलित साहित्य ने अपनी ऊर्जा और चेतना डॉ. अम्बेडकर के दर्शन से प्राप्त की है। आज डॉ. अम्बेडकर के विचार और चिन्तन की व्यपाकता ही दलित साहित्य की मुख्य धारा ह। कँवल भारती के शब्दों में "आधुनिक हिन्दी दलित साहित्य वह है जो दलित मुक्ति के सवालों पर पूरी तरह अम्बेडकरी है। सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सभी क्षेत्रों में उसके सरोकार समाजवादी है।"[1]

भारतीय भाषा साहित्य में सबसे पहले मराठी में दलित साहित्य का आरम्भ हुआ। इसके पीछे महात्मा फुले और डॉ. बाबा साहित अम्बेडकर के विचारों की प्रेरणा तथा दलित पैंथर जुझारू आन्दोलन का प्रभाव था। इसके बाद तमिल, तेलगु, पंजाबी, असमी, बंगला आदि भाषाओं में दलित साहित्य लेखन आरम्भ हुआ। दलित साहित्य का सृजन अन्य भाषाओं की तुलना में हिन्दी में बहुत देर से हुआ। बीसवीं सदी के अंतिम दो दशकों में यह प्रखरता के साथ सामने आया। समय का बदलाव और दबाव कुछ ऐसा था कि सामंती व्यवस्था दलित साहित्य की उपेक्षा न कर सकी।

दलित साहित्य के रचना और विचार की प्रक्रिया के अवलोकनोपरान्त डॉ. भगवानदास वर्मा के शब्दों में दलित साहित्य की प्रवृत्तियों को इस प्रकार रेखांकित किया जा सकता है कि – "इस साहित्य के प्रवृत्ति संघर्षात्मक है। इसमें अन्याय और अन्यायी के खिलाफ चिढ़, आक्रोश और बदले की भावना केन्द्रित है। इसकी प्रकृति निषेधात्मक है जिसमें वर्णाधिष्ठित समाज रचना का विरोध मुख्य है और साध्य है समताधिष्ठित मनुष्य की स्थापना। अपनी रचानात्मक प्रक्रिया में यह साहित्य मार्क्स और बुद्ध के विचारों से अछूता नहीं है लेकिन उसकी मूल प्रेरणा अम्बेडकर–प्रणीत क्रान्ति–दर्शन में रही है।

इसलिए वर्ण–संघर्ष की तरह इसकी यात्रा है और स्वाभिमान तथा अस्मिता के पुष्ट करने के लिए विविध साहित्यिक मंचों के प्रणयन तथा आलोचन–आस्वादन के पृथक निष्कर्षों की माँग जरूरी समझी गई है।"[2]

हिन्दी में दलित साहित्य आत्मकथा, उपन्यास, कहानी, कविता तथा समीक्षा के रूप में लिखा जा रहा है। दलित साहित्य के अंतर्गत कविता के बाद सबसे लोकप्रिय विधा कहानी है। दलित उत्पीड़न एवं दलित चेतना को कहानीकारों ने अनेक रूपों और संदर्भों में कहानी में चित्रित किया है। यह विधा शोषण और संत्रास की वेदना को मुखर कर रही है।

दलित चेतना की कहानियों के रूप में श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', प्रेमचन्द, शिवप्रसाद सिंह आदि ने एक पृष्ठभूमि प्रदान की और उस पर जिन दलित कहानीकारों ने दलित कहानी का सृजन करने का प्रयाय किया उनमें सर्वश्री ओमप्रकाश बाल्मीकि, पुरूषोतम सत्यप्रेमी, मोहनदास नैकिशराय, दयानन्द बटोही, रघुनाथ प्यासा, शिवचन्द्र उमेश, कालीचरण स्नेही, बी.एल नैयर आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। इन सभी की कहानियाँ परम्परा के विरोध की कहानियां हैं जो परम्परा से पहले संघर्ष, फिर विरोध और अन्ततः उसे नकार देती हैं।

आज इक्कीसवीं सदी का साहित्य भी इससे अछूता नहीं है। आम जन की कविता साहित्य की लोकप्रिय विधा है जिसमें कोई भी सामान्य व्यक्ति अपनी अनुभूतियों का जबान दे सकता है। बदलते आर्थिक तंत्रा में आम व्यक्ति की आवाज कविता के माध्यम से उजागर होती है। अपनी संवेदनात्मक प्रतिक्रिया के कारण कविता नवीनतम विमर्शों को भी वर्णित करने में उपयुक्त है। उसकी परिधि में दलित जीवन की त्रासदी भी शामिल है। दलितों के दैनिक जीवन के दुःखों को मानवीय संवेदना के साथ उद्घाटित करके कविता अपनी भूमिका का उचित निर्वहन कर रही है। 21वीं सदी के प्रथम दशक की कविता में दलित चेतना के समानांतर दलितों के समक्ष उत्पन्न नवीन विकट स्थितियों की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है। इस उत्तर आधुनिक दौर में दलित संवेदना को नए कलेवर में लाने का प्रयास क़विता ने बखूबी किया है। इन दलित कविताओं में दलित चेतना, द्वंद्व एवं संघर्ष, उत्पीड़न, उपेक्षा, अत्याचार, भेदभाव, जातीय आधार, प्रतिरोध एवं क्रांतिधर्मी चेतना का दिग्दर्शन होता है। भाव के साथ–साथ भाषा का भी जातिगत आधार प्रयुक्त हुआ है जो प्रामाणिक भाषिक शास्त्र से इतर दलित वेदना की अनुभूति कराने में ज्यादा कारगर एवं सक्षम है। भाव एवं शिल्प की नवीनता एवं यथार्थता ने दलित कविता की संवेदना को निर्मित किया है। इन कविताओं में दलितों के

अस्तित्व एवं उनके जीवन–संघर्ष को व्यक्त करने का प्रयास हुआ है। दलित संवेदना के स्तर पर इन कविताओं में दलितों के दर्द, उनकी अस्मिता, समानता एवं सम्मान की प्राप्ति की दास्तान मिलती है। अपने अस्तित्व एवं प्रतिरोध की व्यापक लड़ाई को भी वह स्पष्टता से प्रकट करती है।

आज हिन्दी में जो दलित साहित्य लिखा जा रहा है उसका एक बड़ा हिस्सा स्वयं दलितों द्वारा रचित है। हिन्दी में जिन दलित लेखकों ने अपनी पहचान बनाई है उनमें ओम प्रकाश बाल्मीकि, डॉ. धर्मवीर, मोहनदास नैकिशराय, जय प्रकाश कर्दम, श्यौराज सिंह बेचैन, कौशल्या बैसंत्री, सूरजपाल चैहान, कंवल भारती, सोहनपाल सुमनाक्षर, कुसुम वियोगी, माता प्रसाद, पुरूषोतम सत्यप्रेमी, प्रेम कपाड़िया, दयानंद बटोही, विमलकीर्ति, कुसुमलता मेघवाल, विपिन बिहारी, तेजसिंह, तेज पाल सिंह, रजनी तिलक, विमल खाडेकर, शत्रुघ्न कुमार, रजत रानी मीनू, सुखवीर सिंह आदि अनेक और भी कई रचनाकार कहानी, कविता, आत्मकथा, उपन्यास, नाटक, संस्मरण, आलोचना आदि विधाओं में लिख रहे हैं।

वर्तमान परिस्थितियों की बात करें तो दलित विमर्श अपनी अवधारणात्मक विकास की प्रक्रिया में है। इसका कोई व्यवस्थित शास्त्र अभी तक नहीं बना है। किन्तु दलित चिन्तन एवं दलित आन्दोलन का वैश्विक अवलोकन करने के बाद जो प्रमुख सिद्धान्त सामने आते हैं वह यह कि दलित अपनी मुक्ति चाहता है, हृदयहीन ब्राह्मणवादी एवं व्यवस्था के भेदभाव से, साथ ही मनुष्य को मनुष्य की अपार सम्भावनाओं के साथ अवलोकन भी करना चाहता है। सबसे बड़ी चीज उसके लिए मनुष्य की अस्मिता की खोज है। इस खोज में वह धर्म का मानवीय गरिमा का सबसे बड़ा अवरोध मानता है। दलित ईश्वर, स्वर्ग, नरक, पुनर्जन्म, अवतारवाद आदि किसी भी तथा कथित दिव्य सत्ता में विश्वास नहीं करता बल्कि मनुष्य के मानवतावाद में वह भौतिक भेदभाव को मानवकृत मानता है, वह किसी भी शास्त्र या संस्था को नहीं मानता जो मानव मात्र में भेदभाव की इजाजत देता हो। इलिए को गैर दलित की सहानुभूति एवं करूणा में बहुत विश्वास नहीं है।

दलित साहित्य के माध्यम में भी विवादों ने अपने अस्तित्व को एक सशक्त धरातल प्रदान किया है। जातिगत घेरे की बंधी में बंधे विद्वानों ने यह धारणा गढ़ ली है कि जातिगत दलित द्वारा लिखित दलित सम्बन्धी साहित्य ही दलित साहित्य है। इसका रचनाकार गैर दलित नहीं हो सकता। ऐसा मानना कदाचित गलत ना होगा कि आरम्भिक दशा में यह धारणा कार्यरत थी परनतु जैसे–जैसे दलित साहित्य विकास की दिशा में अग्रसर होता गया

वैसे–वैसे ही नये प्रतिमानों के साथ नए–नए विवादों का जन्म भी हुआ और समाधान भी। वर्तमान में गौण रूप से यह स्वीकार किया जा रहा है कि दलित साहित्य का रचयिता गैर दलित भी हो सकता है परन्तु दलित साहित्य का आधार दलित जीवन से सम्बन्धित होना अनिवार्य है। इस सन्दर्भ में मराठी कवि नारायण का कहना है कि "1965 में जब यह आन्दोलन शुरू हुआ तो पहला नारा था – केवल दलितों द्वारा लिखा हुआ दलितों का साहित्य दलित वर्ग के बाहर के लेखक भी अच्छा लिखते रहे हैं और उन्हें भी महत्त्व देना चाहिए। "सबसे बड़ी बात साहित्य का निर्माण संवेदना के आधार पर होता है फिर दलित और गैर दलित में संवेदना की बात को क्यों उलझाया जा रहा है।"[3] स्वानुभूति और सहानुभूति की जो चर्चा की जा रही है वह सिर्फ ऊपरी सतह पर ही की गई है क्योंकि जब एक दलित लेखक भी दलित–जीवन की विभिन्न स्थितियों, विभिन्न पात्रों, विभिन्न जातियों को रेखांकित करता है तो वह किस आधार पर स्वानुभूति की बात करता है। कविता, कहानी, नाटकों आदि की रचना तो संवेदना के आधार पर ही की गई है तो फिर भावों से संभबन्धित ऐसे विवादों को खड़ा करने का कोई परियोजन नही है।

दलित लेखक का अनुभव विश्व अत्यन्त समृद्ध है। वह भोगा हुआ यथार्थ लिखता है। उसके पैर वर्तमान में हैं, जड़ें अतीत में और नजरें भविष्य पर। वह समाज से शोषण और विषमता मिटाना चाहता है। दलित साहित्य में समाज का दर्पण नहीं, समाज का दिग्दर्शक है। दलित लेखन ने परम्परागत साहित्यिक मूल्यों का नकारा है। वह मात्र 'सत्यं–शिवं–सुन्दरं' के लिए नहीं लिखता। वह सामाजिक बदलाव के लिए लिखता है, किसी के मनोरंजन के लिए नहीं। उसका लक्ष्य मानवता की स्थापना करना है। दलित साहित्य का भविष्य बहुत उज्ज्वल है और उसके क्षेत्र विस्तार की बहुत संभावनाएं हैं।

## संदर्भ ग्रंथ


1. कंवल भारती, दलित साहित्य की अवधारणा ,रामपुर बोधिसत्व प्रकाशन ,2006 पृष्ठ 17
2. डॉ. वीरेंद्र सिंह यादव: दलित विमर्श के विविध आयाम राधा प्रकाशन, नई दिल्ली 2010
3. डॉ. राजवीर सिंह ' कमल ': दलित समाज दशा और दिशा, क्रांति पब्लिकेशन दिल्ली, 2008

## सहायक पुस्तकें

ओम प्रकाश वाल्मीकि: दलित साहित्य का सौंदर्य शास्त्र, राधाकृष्णन प्रकाशन, नई दिल्ली

इक्कीसवीं सदी का दलित आंदोलन (सं) वीरेंद्र सिंह यादव, राधा प्रकाशन नई दिल्ली, 2011.

डॉ. देवेन्द्र चैबे: आधुनिक साहित्य में दलित विमर्श, ओरियंट ब्लैक स्वान प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2009

डॉ. पुरुषोत्तम सत्य प्रेमी: दलित साहित्य और सामाजिक नयाय, कंचन प्रकाशन नई दिल्ली, 1996

डॉ. श्यौराज सिंह ' बेचैन ':दलित क्रान्ति का साहित्य, संगीता प्रकाशन दिल्ली, 2002